उद्धव गीता

और ग्रंथों के लिए यहां पर क्लिक करें ।

महाभारत में द्युतक्रीड़ा के समय युद्धिष्ठिर ने द्रौपदी को दांव पर लगा दिया और दुर्योधन की ओर से मामा शकुनि ने द्रोपदी को जीत लिया। उस समय दुशासन द्रौपदी को बालों से पकड़कर घसीटते हुए सभा में ले आया। जब वहां द्रौपदी का अपमान हो रहा था तब भीष्मपितामह, द्रोणाचार्य और विदुर जैसे न्यायकर्ता और महान लोग भी बैठे थे लेकिन वहां मौजूद सभी बड़े दिग्गज मुंह झुकाएं बैठे रह गए।

द्रौपदी को घसीटकर लाया जा रहा था तब तक भी द्रौपदी को यह भान नहीं था कि मेरा चीरहरण होने वाला है। जब दुशासन से भारी सभा में द्रौपदी की साड़ी उतारने के लिए कहा गया तब द्रौपदी को इस बात का अहसास हुआ की संकट बड़ा है। उस वक्त उनने अपने सबसे प्रिय सखा भगवान श्रीकृष्ण का नाम पुकारा। 'हरि, हरि, अभयम कृष्णा, अभयम'

उद्धव गीता या उद्धव भागवत में श्रीकृष्ण के सखा उद्धव उनसे इस संबंध में कई सवाल करते हैं। आओ जानते हैं श्रीकृष्ण उद्धव संवाद को...

उद्धव कहते हैं, हे कृष्ण, आप पांडवों के आत्मीय प्रिय मित्र थे। आजाद बांधव के रूप में उन्होंने सदा आप पर पूरा भरोसा किया। कृष्ण, आप

महान ज्ञानी हैं। आप भूत, वर्तमान व भविष्य के ज्ञाता हैं। किन्तु आपने सच्चे मित्र की जो परिभाषा दी है, क्या आपको नहीं लगता कि आपने उस परिभाषा के अनुसार कार्य नहीं किया?

आपने धर्मराज युधिष्ठिर को द्यूत (जुआ) खेलने से रोका क्यों नहीं? चलो ठीक है कि आपने उन्हें नहीं रोका, लेकिन आपने भाग्य को भी धर्मराज के पक्ष में भी नहीं मोड़ा। आप चाहते तो युधिष्ठिर जीत सकते थे। आप कम से कम उन्हें धन, राज्य और यहां तक कि खुद को हारने के बाद तो रोक सकते थे। उसके बाद जब उन्होंने अपने भाईयों को दांव पर लगाना शुरू किया, तब तो आप सभाकक्ष में पहुंच सकते थे। आपने वह भी नहीं किया?

उसके बाद जब दुर्योधन ने पांडवों को सदैव अच्छी किस्मत वाला बताते हुए द्रौपदी को दाँव पर लगाने को प्रेरित किया, और जीतने पर हारा हुआ सब कुछ वापस कर देने का लालच दिया, कम से कम तब तो आप हस्तक्षेप कर ही सकते थे। अपनी दिव्य शक्ति के द्वारा आप पांसे धर्मराज के अनुकूल कर सकते थे। इसके स्थान पर आपने तब हस्तक्षेप किया, जब द्रौपदी लगभग अपना शील खो रही थी, तब आपने उसे वस्त्र देकर द्रौपदी के शील को बचाने का दावा किया। लेकिन आप यह यह दावा भी कैसे कर सकते हैं?

उसे एक आदमी घसीटकर सभा में लाता है, और इतने सारे लोगों के सामने निर्वस्त्र करने के लिए छोड़ देता है। एक महिला का शील क्या बचा? आपने क्या बचाया? अगर आपने संकट के समय में अपनों की सहायता नहीं की तो आपको आपाद-बांधव कैसे कहा जा सकता है? बताइए, आपने संकट के समय में सहायता नहीं की तो क्या फायदा? क्या यही धर्म है?'...इन प्रश्नों को पूछते-पूछते उद्धव का गला रुंध गया और उनकी आंखों से आंसू बहने लगे।

भगवान श्रीकृष्ण मुस्कुराते हुए बोले:- प्रिय उद्धव, यह सृष्टि का नियम है कि विवेकवान ही जीतता है। उस समय दुर्योधन के पास विवेक था, धर्मराज के पास नहीं। यही कारण रहा कि धर्मराज पराजित हुए।

उद्धव को हैरान परेशान देखकर कृष्ण जी आगे बोले : दुर्योधन के पास जुआ खेलने के लिए पैसा और धन तो बहुत था, लेकिन उसे पासों का खेल खेलना नहीं आता था, इसलिए उसने अपने मामा शकुनि का द्यूतक्रीड़ा के लिए उपयोग किया। यही विवेक है। धर्मराज भी इसी प्रकार सोच सकते थे और अपने चचेरे भाई से पेशकश कर सकते थे कि उनकी तरफ से मैं खेलूंगा।

जरा विचार करो कि अगर शकुनी और मैं खेलते तो कौन जीतता? पासे के अंक उसके अनुसार आते या मेरे अनुसार? चलो इस बात को जाने दो। उन्होंने मुझे खेल में शामिल नहीं किया, इस बात के लिए उन्हें

क्षमा किया जा सकता है। लेकिन उन्होंने विवेक-शून्यता से एक और बड़ी गलती की। और वह यह कि उन्होंने मुझसे प्रार्थना की कि मैं तब तक सभाकक्ष में न आऊं, जब तक कि मुझे बुलाया न जाए। क्योंकि वे अपने दुर्भाग्य से खेल मुझसे छुपकर खेलना चाहते थे। वे नहीं चाहते थे, मुझे मालूम पड़े कि वे जुआ खेल रहे हैं।

इस प्रकार उन्होंने मुझे अपनी प्रार्थना से बांध दिया। मुझे सभाकक्ष में आने की अनुमति नहीं थी। इसके बाद भी मैं कक्ष के बाहर इंतजार कर रहा था कि कब कोई मुझे बुलाता है। भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव सब मुझे भूल गए। बस अपने भाग्य और दुर्योधन को कोसते रहे। अपने भाई के आदेश पर जब दुशासन द्रौपदी को बाल पकड़कर घसीटता हुआ सभाकक्ष में लाया, द्रौपदी अपनी सामर्थ्य के अनुसार जूझती रही। तब भी उसने मुझे नहीं पुकारा। उसकी बुद्धि तब जागृत हुई, जब दुशासन ने उसे निर्वस्त्र करना प्रारंभ किया।

जब उसने स्वयं पर निर्भरता छोड़कर- 'हरि, हरि, अभयम कृष्णा, अभयम' की गुहार लगाई, तब मुझे उसके शील की रक्षा का अवसर मिला। जैसे ही मुझे पुकारा गया, मैं अविलम्ब पहुंच गया। अब इस स्थिति में मेरी गलती बताओ?"

उद्धव बोले : कान्हा आपका स्पष्टीकरण प्रभावशाली अवश्य है, किन्तु मुझे पूर्ण संतुष्टि नहीं हुई। क्या मैं एक और प्रश्न पूछ सकता हूं? कृष्ण की अनुमति से उद्धव ने पूछा:- इसका अर्थ यह हुआ कि आप तभी आओगे, जब आपको बुलाया जाएगा? क्या संकट से घिरे अपने भक्त की मदद करने आप स्वतः नहीं आओगे?

कृष्ण जी मुस्कुराए:- उद्धव इस सृष्टि में हरेक का जीवन उसके स्वयं के कर्मफल के आधार पर संचालित होता है।

न तो मैं इसे चलाता हूं और न ही इसमें कोई हस्तक्षेप करता हूं मैं केवल एक 'साक्षी' हूं। मैं सदैव तुम्हारे नजदीक रहकर जो हो रहा है उसे देखता हूं। यही ईश्वर का धर्म है।

उलाहना देते हुए उद्धव ने पूछा- वाह-वाह, बहुत अच्छा कृष्ण, तो इसका अर्थ यह हुआ कि आप हमारे समीप खड़े रहकर हमारे सभी दुष्कर्मों का निरीक्षण करते रहेंगे? हम पाप पर पाप करते रहेंगे और आप हमें साक्षी बनकर देखते रहेंगे? आप क्या चाहते हैं कि हम भूल करते रहें? पाप की गठरी बांधते रहें और उसका फल भुगतते रहें?

तब कृष्ण जी बोले:-उद्धव, तुम शब्दों के गहरे अर्थ को समझो। जब तुम समझकर अनुभव कर लोगे कि मैं तुम्हारे समीप साक्षी के रूप में हर पल हूं, तो क्या तुम कुछ भी गलत या बुरा कर सकोगे?

तुम निश्चित रूप से कुछ भी बुरा नहीं कर सकोगे। जब तुम यह भूल जाते हो और यह समझने लगते हो कि मुझसे छुपकर कुछ भी कर सकते हो, तब ही तुम कठिनाइयों में फंसते हो! धर्मराज का अज्ञान यह था कि उसने माना कि वह मेरी जानकारी के बिना जुआ खेल सकता है। अगर उसने यह समझ लिया होता कि मैं प्रत्येक के साथ हर समय साक्षी रूप में उपस्थित हूं तो क्या खेल का रूप कुछ और नहीं होता?

उद्धव मंत्रमुग्ध हो गए और बोले:- प्रभु कितना गहरा दर्शन है। कितना महान सत्य। 'प्रार्थना' और 'पूजा-पाठ' से, ईश्वर को अपनी मदद के लिए बुलाना तो महज हमारी 'पर-भावना' है। किंतु जैसे ही हम यह विश्वास करना शुरू करते हैं कि 'ईश्वर' के बिना पत्ता भी नहीं हिलता, तब हमें साक्षी के रूप में उनकी उपस्थिति महसूस होने लगती है। गड़बड़ तब होती है, जब हम इसे भूलकर सांसारिकता में डूब जाते हैं।

ओम्

साभार